

## मुरलीधरन बनाम केरल राज्य

अप्रैल 18, 2001

[के. टी. थॉमस और आर. पी. सेठी, न्यायाधिपतिगण]

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 : धारा 438. अग्रिम जमानत - स्वीकृति - शराब त्रासदी के परिणामस्वरूप बड़े पैमाने पर व्यक्तियों की मृत्यु - गंभीर अपराधों की श्रृंखला में अभियुक्त को मुख्य अभियुक्तों में से एक माना जाता था - सत्र न्यायाधीश ने अभियुक्त को इस आधार पर अग्रिम जमानत दे दी कि सह-अभियुक्त के इकबालिया बयान के अलावा जांच एजेंसी द्वारा अभियुक्त को अपराध से जोड़ने के लिए कोई सामग्री एकत्र नहीं की जा सकती थी - लेकिन उच्च न्यायालय ने सत्र न्यायाधीश के आदेश को उलट दिया - शुद्धता - अभिनिर्धारित - कोई भी न्यायालय यह अनुमान लगाने का जोखिम नहीं उठा सकता है कि जाँचकर्ता एजेंसी एक अभियुक्त के खिलाफ आरोप को साबित करने के लिए अधिक सामग्री का पता लगाने में विफल रहेगी - एक अभियुक्त से अभिरक्षा में पूछताछ अनिवार्य रूप से आवश्यक है - इसलिए, उच्च न्यायालय ने सत्र न्यायाधीश के आदेश को सही ढंग से उलट दिया - केरल अबकारी अधिनियम, धारा 8

अपीलार्थी को केरल अबकारी अधिनियम की धारा 8 के तहत अपराध सहित गंभीर अपराधों की एक श्रृंखला में प्रमुखों में से एक माना जाता था, जिसमें शराब त्रासदी के रूप में पहचाने जाने वाले

व्यक्तियों की बड़े पैमाने पर मौतों की अगली कड़ी के रूप में आपराधिक मामले दर्ज किए गए थे, अपीलार्थी को सत्र न्यायाधीश द्वारा आपराधिक प्रक्रिया संहिता की धारा 438 के तहत अग्रिम जमानत इस आधार पर दी गई कि जांच एजेंसी द्वारा अपीलार्थी को अपराध से जोड़ने के लिए कोई सामग्री एकत्र नहीं की जा सकती है, सिवाय सह-अभियुक्त के इकबालिया बयान के। उच्च न्यायालय ने सत्र न्यायाधीश के आदेश को उलट दिया। इसलिये यह अपील है।

अपील को खारिज करते हुए अदालत ने अभिनिर्धारित किया :

1.1. व्यक्तियों द्वारा की गई आपराधिक सजिशों में शामिल सभी लिंक का पता लगाने के लिये जांच एजेंसी के लिये किसी आरोपी से हिरासत में पूछताछ अनिवार्य रूप से आवश्यक है।

भारत संघ बनाम रामसमुज, [1999] 9 SCC 429, पर भरोसा व्यक्त किया।

1.2. सत्र न्यायाधीश ने जिस अतिशयोक्तिपूर्ण तरीके से यह सोचने का निर्णय लिया कि "सह-अभियुक्त के इकबालिया बयान के अलावा अपीलार्थी को अपराध से जोड़ने के लिए जांच एजेंसी द्वारा कोई भी सामग्री एकत्र नहीं की जा सकती है", वह निंदा के योग्य है। एक सत्र न्यायाधीश की ओर से निकली ऐसी स्वच्छंद सोच न्यायिक निंदा की पात्र है। कोई भी अदालत यह नहीं मान सकती कि जांच एजेंसी किसी आरोपी के खिलाफ आरोप

साबित करने के लिये और अधिक सामग्री का पता लगाने में विफल रहेगी। कोई यह समझने में विफल है कि किस बात ने सत्र न्यायाधीश को इस प्रारंभिक चरण में यह निष्कर्ष निकालने के लिए प्रेरित किया होगा कि जांच एजेंसी अपीलार्थी को अपराध से जोड़ने के लिये कोई सामग्री एकत्र नहीं कर पायेगी। सत्र न्यायाधीश का अपीलकर्ता को गिरफ्तारी से पहले जमानत आदेश देने का आशीर्वाद इस बात का संकेत बना रहेगा कि कैसे आपराधिक प्रक्रिया संहिता 1973 की धारा 438 के अंतर्गत सत्र न्यायाधीश के विवेक का दुरुपयोग किया गया है। यह खुशी की बात है कि उच्च न्यायालय ने इस तरह के आदेश को अधिक समय तक लागू नहीं रहने दिया। उच्च न्यायालय द्वारा पारित आक्षेपित आदेश से अपीलकर्ता द्वारा लिया गया एक अहितकर लाभ उलट दिया गया। [60-डी-एफ]

आपराधिक अपीलीय क्षेत्राधिकार

आपराधिक अपील संख्या 507-510 / 2001

(आपराधिक एम.सी. संख्या 1187,1188,1235 और 1236 / 2001 में केरल उच्च न्यायालय के निर्णय और आदेश दिनांक 8.3.2001 से।)

यू. आर. ललित, ई. एम. एस. अनम और फजलिन अनानी, अपीलार्थी के लिए

न्यायालय का निर्णय, थॉमस, न्यायाधिपति द्वारा द्वारा दिया गया था।

अनुमति दी गई।

अपीलार्थी, जिसे जाँच एजेंसी ने केरल अबकारी अधिनियम (संक्षेप में "अधिनियम") की धारा 8 के तहत अपराध सहित गंभीर अपराधों की एक श्रृंखला में प्रमुखों में से एक के रूप में वर्णित किया था, को उन सभी मामलों में अग्रिम जमानत के आदेशों को सत्र न्यायाधीश, पत्तनमथिट्टा, से प्राप्त करना आसान लगा। लेकिन केरल उच्च न्यायालय ने एक महीने के भीतर, एक विद्वान एकल न्यायाधीश द्वारा पारित आदेश के अनुसार सत्र न्यायाधीश के उन आदेशों को उलट दिया, जिसे इस न्यायालय में चुनौती देने की मांग की गई है। विशेष अनुमति द्वारा ये अपीले इसी प्रयोजन के लिये हैं। अपीलकर्ता के विद्वान वकील को सुनने के बाद हमने प्रतिवादी केरल राज्य के वकील की दलीले सुनने की आवश्यकता नहीं समझी। इसलिये हम अपीलार्थी के तर्कों के आधार पर इन अपीलको का निस्तारण करने के लिये आगे बढ़ते हैं।

कोल्लम (केरल) जिले में शराब त्रासदी के रूप में जानी जाने वाली घटना मे बडे पैमानेपर लोगो की मौत के बाद कई आपराधिक मामले दर्ज किये गये थे। इन प्रकरणो में बडी संख्या में लोग स्थाई रूप से अक्षम हो गये। ऐसे मामलो के संबंध में गिरुतार व्यक्ति जेलो मे है क्योकि उन्हे जमानत नहीं दी गई है। अपीलकर्ता को आशंका थी कि यदिसभी नही तो उनमें से कुछ मामलो के सिलसिले मे उसे भी गिरफतार किया जायेगा।

इसलिये, फरार रहने के दौरान, उसने गिरफ्तारी पूर्व आदेश के लाभ के लिये सत्र न्यायालय पट्टनमथिट्टा मे संपर्क किया। उसे वही मिला जो वह चाहता था। अग्रिम जमानत का आदेश देने वाले सत्र न्यायाधीश ने जांच किॉर्ड से पाया कि यह मानने के कारण है कि अपीलकर्ता को भी मामले मे आरोपी के रूप में फंसाया जायेगा। सत्र न्यायालय मे लोक अभियोजक द्वारा उठाई गई गंभीर आपत्तियों का सत्र न्यायाधीश पर कोई प्रभाव नहीं पडा, जो कि गिरफ्तारी - पूर्व जमानत आदेश देने के लिये उनके द्वारा अपनाये गये हल्के-फुल्के तर्क से पता चलता है।

सत्र न्यायाधीश के अनुसार सह-अभियुक्त के इकबालिया बयान को छोडकर याचिकाकर्ता को अपराध से जोडने के लिये जांच एजेंसी द्वारा कोई सामग्री एकत्र नहीं की जा सकी। उसने यह भी विचार किया किया "मुझे नहीं लगता कि अग्रिम जमानत देने की स्थिति में अभियोजन पक्ष पर कोई प्रतिकूल प्रभाव पडेगा, खासकर तब जब याचिकाकर्ता को अब तक मामले में आरोपी के रूप में सूचीबद्ध नहीं किया गया है।"

यह परेशान करने वाली बात है कि एक सत्र न्यायाधीश ने उन अपराधो से जुडे मामलो में अग्रिम जमानत देने के लिये इस तरह के बेतुके तर्क को अपनाया है, जिनके लिये विधायिका ने नियमित जमानत देने के संबंध में भी कडे प्रतिबंध लगाये है।

इसमें शामिल अपराधो में से एक अधिनियम की धारा 8 (2) है, जिसमें एक अवधि के लिए कारावास से दंडनीय है, जो दस साल तक बढ़

सकता है और जुर्माना जो कि एक लाख रुपये से कम नहीं होगा। अधिनियम की धारा 41ए कहती है कि तीन साल या उससे अधिक के कारावास की सजा वाले अपराध के आरोपी किसी भी व्यक्ति को जमानत पर या अपने बॉर्ड पर तब तक रिहा नहीं किया जायेगा जब तक:

"(1) लोक अभियोजक या सहायक लोक अभियोजक, जैसा भी मामला हो, को ऐसी रिहाई के लिए आवेदन का विरोध करने का अवसर दिया गया है, और

(2) जहां लोक अभियोजक या सहायक लोक अभियोजक, जैसा भी मामला हो, किसी आवेदन का विरोध करता है, वहां अदालत को समाधान होता है कि यह विश्वास करने के लिए उचित आधार हैं कि वह ऐसे अपराधों का दोषी नहीं है और उसके द्वारा जमानत पर रहते हुये कोई अपराध करने की संभावना नहीं है।"

उपरोक्त प्रावधान स्वापक औषधि और मनः प्रभावी पदार्थ अधिनियम की धारा 37 के अनुरूप है। इस न्यायालय ने बार बार माना है कि उस अधिनियम के तहत अपराध में शामिल किसी भी व्यक्ति को उक्त धारा में निर्धारित शर्तों के उल्लंघन में जमानत पर रिहा नहीं किया जायेगा। (भारत संघ बनाम रामसमुझ और एक अन्य [1999] 9 एस. सी. सी. 429)। यदि गिरफ्तारी के बाद भी किसी आरोपी के संबंध में स्थिति ऐसी है, तो यह समझ से परे है कि जब वह गिरफ्तारी से पहले जमानत के लिए अदालत

का दरवाजा खटखटायेगा, यह जानते हुये कि उसे भी आरोपी के रूप में फंसाया जायेगा, तो उसकी स्थिति कम कैसे होगी। जांच एजेंसी के लिये व्यक्तियों द्वारा की गई आपराधिक साजिशों में शामिल सभी लिंक का पता लगाने के लिये ऐसे आरोपियों की हिरासत में पूछताछ अनिवार्य रूप से आवश्यक है जो अंततः बड़ी त्रासदी का कारण बनीं। हम उस धिक्कारपूर्ण तरीके पर अपनी निंदा व्यक्त करते हैं जिसमें सत्र न्यायाधीश ने यह सोचने का फैसला किया कि जांच एजेंसी द्वारा याचिकाकर्ता को अपराध से जोड़ने के लिये आरोपी के इकबालिया बयान के अलावा कोई सामग्री एकत्र नहीं की जा सकती है। इस तरह की एक स्वच्छंद सोच एक सत्र से न्यायाधीश से उत्पन्न होती है तो वह न्यायिक निंदा के पात्र है। कोई भी बदलात यह नहीं मान सकती कि जांच एजेंसी किसी आरोपी के खिलाफ आरोप साबित करने के लिये और अधिक सामग्री का पता लगाने में विफल रहेगी। हम यह समझने में असमर्थ हैं कि सत्र न्यायाधीश को इतनी जल्दी निष्कर्ष निकालने के लिये क्या प्रेरित किया होगा, इस स्तर पर, कि जांच एजेंसी अपीलकर्ता को अपराध से जोड़ने के लिये कोई भी सामग्री एकत्र करने में सक्षम नहीं होगी। सत्र न्यायाधीश का अपीलकर्ता को गिरफ्तारी से पहले जमानत आदेश देने का आशीर्वाद इस बात का संकेत बना रहेगा कि कैसे आपराधिक प्रक्रिया संहिता 1973 की धारा 438 के अंतर्गत सत्र न्यायाधीश के विवेक का दुरुपयोग किया गया है। यह खुशी की बात है कि केरल के उच्च न्यायालय ने इस तरह के आदेश को अधिक समय तक लागू नहीं रहने दिया। उच्च न्यायालय के विद्वान एकल

न्यायाधीश द्वारा पारित आक्षेपित आदेश से अपीलकर्ता द्वारा लिया गया एक अहितकर लाभ सही तौर पर उलट दिया गया।

अपीले खारिज की गई।



यह अनुवाद आर्टिफ़िशियल इंटेलिजेंस टूल "सुवास" के जरिये अनुवादक की सहायता से किया गया है ।

**अस्वीकरण** - इस निर्णय का अनुवाद स्थानीय भाषा में किया जा रहा है, एवं इसका प्रयोग केवल पक्षकार इसको समझने के लिए उनकी भाषा में कर सकेंगे एवं यह किसी अन्य प्रयोजन में काम नहीं ली जायेगी। सभी आधिकारिक एवं व्यवहारिक उद्देश्यों के लिए उक्त निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही विश्वसनीय माना जायेगा एवं निष्पादन एवं क्रियान्वयन में भी उसी को उपयोग में लिया जायेगा।